

कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह एवं जयशंकर प्रसाद की नाट्यकृतियों का तुलनात्मक अध्ययन

सत्यपाल तिवारी एवं विशाल भारतीय
[https://doi.org/ 10.61410/had.v21i2.301](https://doi.org/10.61410/had.v21i2.301)

सारांश:

हिन्दी के ऐतिहासिक नाटककारों की परम्परा में महाकवि कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह का स्थान गौरवपूर्ण है। यद्यपि वे भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र तथा महाकवि जयशंकर प्रसाद की परम्परा के नाटककार हैं, तथापि उनके नाटकों की सांस्कृतिक राष्ट्रीयता उन्हें उत्कर्षकाल के नाटककारों में विशिष्ट बनाती है।

बीज शब्द: ऐतिहासिक नाटक, राष्ट्रवाद/राष्ट्रीय चेतना, कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तथा जयशंकर प्रसाद, नाट्य साधना, सांस्कृतिकचेतना, छायावाद।

कुँवर जी अपने प्रथम उत्कर्षकाल की दो काव्य-कृतियाँ मेघमाला (1942) तथा शम्पा (1943) हिन्दी जगत को सौंपने के बाद काव्य-सर्जन के साथ-साथ नाट्य-सर्जन में प्रवृत्त हुए थे। उनके समक्ष भारतीय तथा पाश्चात्य नाटककारों की एक गौरवशाली परम्परा थी। जहाँ एक ओर भारत के विश्वजयी नाटककार कालिदास के नाटक थे, तो वहीं दूसरी ओर अंग्रेजी भाषा के गौरव महाकवि शेक्सपियर के नाटक तथा हिन्दी के ऐतिहासिक नाटककारों की अपनी गौरवशाली परम्परा भी थी। उन्होंने अपने अध्यवसाय से भारतीय तथा पाश्चात्य नाटककारों की इस परम्परा के विशिष्ट नाटकों का गम्भीर अवगाहन किया था। परन्तु अपनी राष्ट्रवादी विचारधारा के कारण उनका झुकाव भारतीय नाट्य परम्परा की ओर अधिक था इसलिए उनके सभी नाटक (एकांकी तथा पूर्ण नाटक) उनके राष्ट्रवाद का जयघोष करते हैं।

हिन्दी में ऐतिहासिक नाटकों का सूत्रपात भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के नाटकों से होता है। वे अपने युग की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक चेतना-भूमियों से भली-भाँति अवगत थे। देश पराधीन था। अंग्रेजों के अत्याचार तथा प्रतारणाएं बढ़ रही थीं। इसीलिए उनमें देश-जागरण की भावना का उदय होना स्वाभाविक था। इस स्थिति में उनका ध्यान अपने अतीत की ओर गया और उन्हें लगा था कि हमारे देश के अतीत में आज भी बहुत कुछ ऐसा है, जिससे हमारे देश की रक्षा हो सकती है। इतिहास के इन्हीं प्रेरक प्रसंगों के कारण भारतेन्दु जी का पहला ऐतिहासिक नाटक 'नीलदेवी' पाठकों के समक्ष आया था।

आधुनिक युग में काव्य-साधना के साथ-साथ नाटकों की रचना करने वाले तीन कवियों- (1) भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र, (2) जयशंकर प्रसाद तथा (3) कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह में, कुँवर जी का स्थान वैशिष्ट्यपूर्ण है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने पराधीन भारत की दुर्दशा के साथ-साथ देश में राष्ट्रीय,

-
- शोध निर्देशक, मानविकी 30प्र0 रा0ट0मु0वि0वि0, प्रयागराज।
 - शोध छात्रा- हिन्दी विभाग, मानविकी 30प्र0 रा0ट0मु0वि0वि0, प्रयागराज।
-

सांस्कृतिक तथा जातीय चेतना को जागृत करने का प्रयास किया है। जयशंकर प्रसाद के ऐतिहासिक नाटकों में देश की राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक गरिमा का गौरव-गान है। वे भारतीय तथा पाश्चात्य शैलियों के समन्वय के कारण स्वच्छंदतावादी कोटि के नाटककार कहे जाते हैं। इन दोनों नाटककारों के नाटकों के चरित-नायक इतिहास-प्रख्यात नर और नारियाँ हैं।

इससे अलग कुँवर जी ने हिन्दी की सनातन-ऋषि-परम्परा के महान् कवियों के जीवन-वृत्त की विशिष्ट घटनाओं को आधार बनाते हुए चरित-प्रधान ऐतिहासिक सांस्कृतिक तथा राष्ट्रजागरण के नाटक रचे। इस नूतन शैली के नाटकों के वे रचयिता ही नहीं, पुरस्कर्ता भी हैं। इसके पहले ऐसे नाटक नहीं रचे गये थे। और जो नाटक रचे भी गये थे, वे कल्पना प्रधान अधिक हैं।

छायावाद युग में सबसे बड़े नाटककार के रूप में प्रसाद जी सामने आते हैं। प्रसाद के सभी नाटक ऐतिहासिक नाटक हैं। इन नाटकों में इतिहास और कल्पना का, एवं भारतीय तथा पाश्चात्य नाट्य शैलियों का अद्भुत समन्वय है। ये नाटक मूल रूप में साहित्यिक नाटक हैं। इनमें स्वच्छन्दतावाद की भूमिका पर प्रेम और सौंदर्य, मनोविज्ञान तथा राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना को साकार किया गया है। यद्यपि प्रसाद छायावाद युग के सर्वश्रेष्ठ नाटककार माने जाते हैं, तथापि उनके नाटकों की आलोचना की गयी।

छायावाद के नाटककारों, विशेष रूप से प्रसाद तथा कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह जी ने अपने नाटकों द्वारा हमारी राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक चेतना को रूपायित किया है। यही कारण है कि हिन्दी-समीक्षा प्रसाद को छायावाद का सर्वश्रेष्ठ कवि तथा नाटककार मानती आ रही है। प्रसाद और कुँवर साहब आधुनिक युग की दो अतुलनीय ऐसी प्रतिभाएँ हैं, जिनकी तुलना संभव नहीं है। यदि एक ने अपने ऐतिहासिक तथा राष्ट्रीय नाटकों द्वारा हिन्दी-साहित्य को समृद्धि प्रदान की है, तो दूसरे ने अपने सांस्कृतिक-राष्ट्रीय तथा जीवनी-परक नाटकों द्वारा हिन्दी की नाट्य परम्परा में एक नया अध्याय जोड़ा है। छायावाद के इन दोनों नाटककारों का उद्देश्य एक ही है। दोनों राष्ट्रीय-चेतना के उन्नायक नाटककार हैं, इसीलिए देश-प्रेम की अपनी वैयक्तिक अनुभूति को समष्टि की अनुभूति बनाने में दोनों नाटककारों को सफलता मिली है।

हिन्दी के ऐतिहासिक नाटककारों की परम्परा में उत्कर्षकाल के नाटककारों में महाकवि कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह को एक अन्यतम नाटककार की संज्ञा प्रदान की गयी है। इसका कारण यह है कि उनके नाटक सांस्कृतिक राष्ट्रीयता की भावना से परिपूर्ण हैं। कुँवर जी की नाट्य-साधना के व्यावर्तक महत्त्व की समझने के लिए हमारा ध्यान कुँवर जी तथा प्रसाद की नाट्य-साधना तथा परिस्थितियों की ओर जाना आवश्यक है। जब तक इन दोनों ऐतिहासिक नाटककारों की नाट्य-साधना की परिस्थितियों तथा उनके नाट्य-कर्म का तुलनात्मक अनुशीलन नहीं किया जायेगा, तब तक कुँवर जी की नाट्य-साधना के महत्त्व को समझना संभव नहीं है। यह किसी को बताने की आवश्यकता नहीं है कि जिस समय प्रसाद ने नाटकों की रचना प्रारम्भ की थी, उस समय बनारस नाट्य-सर्जन तथा मंचन का कलकत्ता के बाद सबसे बड़ा केन्द्र बन चुका था। जहाँ एक ओर पारसी थिएटर सक्रिय था, वहीं हरिश्चन्द्र तथा बदरी नारायण चौधरी हिन्दी रंग-मंच का समारम्भ कर चुके थे। बनारस में नाट्य-सर्जन का यह एक ऐसा वातावरण बना, जिसमें श्रेष्ठ नाटकों के सर्जन और उनके मंचन का विकास संभव हो सकता था।

प्रसाद अपने युग के नाट्य-सर्जन तथा रंग-मंच की वास्तविकता से परिचित थे। इसलिए वे यह अनुभव कर रहे थे कि हिन्दी में साहित्यिक तथा ऐतिहासिक नाटकों का अभाव-सा है। यही कारण है कि उन्होंने भारत के प्राचीन इतिहास का गवेषणापूर्ण अध्ययन प्रारम्भ किया। उन्होंने अपनी इस अध्यवसायी प्रवृत्ति के कारण इतिहास के उन महत्वपूर्ण अंशों की खोज की जिन तक हमारे इतिहासकार भी नहीं पहुँच सके थे। यद्यपि उनके नाटक मुख्यरूप से गुप्तकाल और बौद्धयुग से सम्बन्धित हैं, तथापि पौराणिक आख्यानों के प्रति भी उनका रुझान रहा है। 'जन्मेजय का नागयज्ञ' इस बात का जीवन्त उदाहरण है। जब हम प्रसाद जी के नाट्यकर्म पर दृष्टिपात करते हैं, तो ज्ञात होता है कि उनके अधिकांश नाटक ऐतिहासिक नाटक हैं और उनके नाटकों के नायक तथा पात्र राष्ट्र के उत्थान में लगे हुए हैं, परन्तु बौद्ध धर्म के प्रभाव के कारण उनके नाटकों के नायकों में संसार के प्रति एक उदासीनता का भाव देखा जा सकता है। 'चन्द्रगुप्त' नाटक उनका एक ऐसा ऐतिहासिक नाटक है, जिसमें राष्ट्रीय भावना स्पष्ट परिलक्षित होती है। यह नाटक उनके संघर्षशील राष्ट्र-प्रेम का अनुपम उदाहरण है। तात्पर्य यह है कि प्रसाद ऐसे उच्चकोटि के ऐतिहासिक नाटककार हैं, जिनके नाटकों में इतिहास और कल्पना का अद्भुत समन्वय है। इस इतिहास और कल्पना के समन्वय के साथ-साथ उनके नाटकों में पाश्चात्य तथा भारतीय नाट्य-शैलियों का समन्वय भी दृष्टिोचर होता है। यह कल्पना जहाँ उनके नाटकों में आकर्षण पैदा करती है, वहीं कल्पना की अतिशयता उनके नाटकों को राष्ट्रीय संघर्ष से पृथक् करती हुई भी प्रतीत होती है। यद्यपि इन नाटकों की सृजनशीलता में वे एक समर्थ स्वच्छन्दतावादी नाटककार के रूप में प्रतिष्ठित होते हैं।

प्रसाद जी के नाट्य-सृजन के इस जीवन्त परिवेश के विपरीत यदि महाकवि कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह के नाट्य-सर्जन के परिवेश पर विचार करते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि महाकवि कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह को वह परिवेश नहीं मिला, जो प्रसाद जी को मिला था। कुँवर जी मूलतः ग्रामवासी हैं और गाँव के प्रति उनका अनुराग जीवनपर्यन्त बना रहा। गाँवों के सघन सम्पर्क का प्रभाव उनके काव्यादर्श में भी परिलक्षित होता है। बनारस में वे केवल एक वर्ष (1936-37) ही रह सके थे। यद्यपि इस अवधि में वे प्रसाद तथा बनारस के अन्य साहित्यकारों के सम्पर्क में भी आये, परन्तु अधिक समय तक बनारस में न रह पाने के कारण उस परिवेश का वे लाभ नहीं उठा सकें।

कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह एक देश-भक्त निष्ठावान साहित्यकार हैं। इसीलिए उनके नाटकों में जो सांस्कृतिक राष्ट्रीयता मुखरित हुई है, वह उनकी इसी निष्ठा का प्रतिफल है। अपनी इसी निष्ठा के कारण वे अपने युग के सभी ऐतिहासिक नाटककारों से सबसे आगे निकलते हुए प्रतीत होते हैं। जहाँ ये एक ओर भारत की ऋषि-परम्परा के कवियों के जीवनवृत्त की घटनाओं पर आधारित एकांकी तथा पूर्ण नाटकों के सर्जन द्वारा भारत की सांस्कृतिक राष्ट्रीयता का जयघोष करते हैं, वहीं वे अपने उन ऐतिहासिक (एकांकी) नाटकों द्वारा जो राष्ट्रीयता के प्रतिमान महापुरुषों के जीवन-वृत्त की घटनाओं पर आधारित है, देश के जागरण का जयघोष करते हुए प्रतीत होते हैं। 'चाणक्य' नामक एकांकी इस बात का अन्यतम उदाहरण है।

नाटकों की सफलता रंग-मंच पर आधारित है। जो नाटक रंग-मंच पर पूरी तरह से अभिनेय होते हैं, उन्हें ही सफल नाटक माना जाता है। अगर रंग-मंच की कसौटी पर प्रसाद के नाटकों को कसा जाय, तो वे असफल नाटक प्रतीत होंगे। कारण यह है कि उनके नाटकों की भाषा कवित्वमय

है। उनके संवाद प्रायः लम्बे हैं तथा उनमें स्वगत-कथन का बाहुल्य है। उनके नाटकों की रहस्यात्मकता उनके नाटकों की बोधगम्यता में बाधक है। अपनी गंभीर प्रवृत्ति के कारण भी उनके नाटक मनोरंजकता में बाधक हैं। पाश्चात्य नाटकों के प्रभाव के कारण वे शिक्षाप्रद भी नहीं बन सके। उनके नाटकों की समाप्ति भारतीय परम्परा से भिन्न है। वे न सुखान्त हैं और न दुःखान्त, वे प्रसादान्त हैं। उनकी यह प्रसादान्तता श्रेष्ठ साहित्यकारों को एक नया आलोक तो प्रदान करती है, परन्तु सामान्य दर्शकों को अनिश्चयात्मक अवस्था में छोड़ देती है और इसी कारण उन पर अनभिनेयता का दोषारोपण भी लगाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त उनका दृश्यविधान और स्थान संकलन भी उनके नाटकों की अभिनेयता में बाधक है। इसके विपरीत कुँवर जी के नाटक भाषा और संवादों की दृष्टि से अधिक अभिनेय हैं। कारण यह है कि कुँवर साहब ने अपने नाटकों में आद्योपान्त संस्कृतनिष्ठ प्रांजल भाषा का प्रयोग किया है और अनेक स्थल तो ऐसे हैं, जहाँ उनकी भाषा काव्यात्मक हो उठी है।

महाकवि कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह को उत्कर्षकाल का सर्वश्रेष्ठ नाटककार कहा गया है, क्योंकि उनके नाटक सांस्कृतिक राष्ट्रीयता से परिपूर्ण हैं। ऐसी सांस्कृतिक राष्ट्रीयता हिन्दी के किसी भी ऐतिहासिक नाटककार के नाटकों में नहीं पायी जाती। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तथा जयशंकर प्रसाद दोनों हिन्दी के श्रेष्ठ नाटककार हैं और इन दोनों के नाट्यकर्म से हिन्दी जगत सुपरिचित और अभिभूत है। परन्तु यदि प्रसाद तथा कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह के नाटकों की तुलना की जाय, यद्यपि ये दोनों नाटककार तुलनीय नहीं हैं, तथापि कुँवर चन्द्र प्रकाश के नाट्यकर्म के अवदान के मूल्यांकन के लिए यह तुलना अनिवार्य है, तो हमें पता चलता है कि प्रसाद निःसन्देह हिन्दी के उच्चकोटि के ऐतिहासिक नाटककार हैं, परन्तु उनके नाटकों का कल्पना पक्ष उनके नाटकों की राष्ट्रीयता को कम करता हुआ प्रतीत होता है। इसका प्रमाण उनके नाटकों के प्रमुख पात्र आजतशत्रु, स्कन्दगुप्त, देव सेना आदि हैं। अजातशत्रु तथा स्कन्दगुप्त, क्रमशः अजातशत्रु तथा स्कन्दगुप्त नाटकों के नायक हैं, जो सत्ता तथा देश के लिए संघर्ष तो करते हैं, परन्तु बौद्धदर्शन तथा प्रसाद की दार्शनिकता के प्रभाव तथा अपनी मानसिकता के आधार पर पलायनवादी प्रतीत होते हैं। इनमें संघर्ष की उस भावना का अभाव परिलक्षित होता है, जो स्वाधीनता संग्राम के काल में रचे जाने वाले नाटकों में आनी चाहिए थी। स्कन्दगुप्त प्रारम्भ से ही सत्ता से उदासीन है। उसका यह कहना—“अधिकार सुख कितना मादक और सारहीन है। अपने को कर्ता तथा नियामक समझने की स्पृहा उससे बेगार कराती है। इस सन्दर्भ में प्रमाण है।”

इसके विपरीत कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह के नाटक ठोस यथार्थ की भूमि पर रचे गये हैं। इन नाटकों में इतिहास भी पूरी तरह सुरक्षित है और पात्रों के चरित्र को पूरा विकास भी मिलता है। यहाँ न कोई अस्वाभाविकता है और न कोई फैंटसी। उनके नाटकों के सभी पात्र मानव-जीवन के उच्चादर्शों से परिपूर्ण हैं और उनमें पलायन की प्रवृत्ति का लेशमात्र भी सन्निवेश नहीं है। महर्षि वाल्मीकि, महर्षि वेदव्यास, महाकवि कालिदास, महाकवि तुलसीदास, जनकवि जगनिक, महाकवि चन्द्रवरदायी, महाकवि भूषण आदि तो संघर्षशील हैं ही, इनके अन्य पात्रों राम, सीता, लव, कुश, विक्रमादित्य, पृथ्वीराज चौहान, शिवाजी आदि के चरित्रों में संघर्षशीलता के साथ-साथ देश पर मर मिटने की भावना प्रबलतर है। उनके इन चरित्रों द्वारा जहाँ एक ओर राष्ट्रीयता मुखरित होती है, वहीं दूसरी ओर भारतीय संस्कृति के उन उज्ज्वल पक्षों को उद्घाटित किया गया है, जो भारतीय संस्कृति के मूलाधार हैं।

ऐतिहासिक नाटकों के इन नायकों के अतिरिक्त “चाणक्य” भी कुँवर साहब के एकांकी नाटक का एक ऐसा नायक है, जो किसी युद्ध के संघर्ष को विस्तार से जानना तो चाहता है, परन्तु उस संघर्ष

में पराजय की परिस्थितियों को न जानना चाहता है और न सुनना। चाणक्य राजनीति का ही नहीं, भारत की राष्ट्रीयता का प्रतिमान महापुरुष है। वह अपने तीन शिष्यों—चन्द्रगुप्त, सिंहरण तथा अलका के सहारे विश्वविजय का दम्भ भरने वाले सिकन्दर को पराजित कर उसे उसके देश वापस जाने को बाध्य कर देता है। राष्ट्र के प्रति संघर्ष की यह जिजीविशा—शक्ति नाटककार की निष्ठा का परिणाम है जो उसके समस्त नाट्य—कर्म में प्रतिबिम्बित होती है। कुँवर जी की यही सांस्कृतिक राष्ट्रीयता की निष्ठा उन्हें आधुनिक युग का सर्वश्रेष्ठ नाटककार घोषित करती है।

काव्य हो अथवा नाटक, यदि वह अपनी परम्परा से सन्नद्ध नहीं है, तो वह कालजयी नहीं माना जा सकता है, क्योंकि परम्परा ही जीवित संस्कृति है। इसी में देश की राष्ट्रीयता उसकी अस्मिता संरक्षित रहती है। तुलसी, सूर, कबीर, जायसी, मीरा, रसखान, भारतेन्दु, निराला, प्रसाद आदि कवि भारत की इसी सांस्कृतिक गरिमा के गायक तथा उन्नायक कवि हैं। उसी सनातन परंपरा की सांस्कृतिक राष्ट्रीयता की चेतना कुँवर साहब के नाटकों का प्रतिपाद्य है। उनके नाटकों में जहाँ एक ओर भारत के इतिहास के उन गौरवशाली महान पुरुषों का चरित्र अपनी सम्पूर्णता में उद्घाटित हुआ है, वहीं दूसरी ओर देश की युवा पीढ़ी के लिए राष्ट्र—निर्माण का जागरण भी है। यदि हम सांस्कृतिक राष्ट्रीयता की इस पृष्ठभूमि में कुँवर साहब के नाट्य—कर्म का अनुशीलन करते हैं, तो ज्ञात होता है कि वे आधुनिक युग के सर्वश्रेष्ठ ऐतिहासिक नाटककार हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तथा जयशंकर प्रसाद ये दोनों ही उच्चकोटि के राष्ट्रवादी नाटककार हैं। आचार्य कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह स्वयं इन दोनों नाटककारों को अपना आदर्श मानते रहे हैं। यही नहीं, उन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन में इस मर्यादा की रक्षा की है और वे अपने किसी आदर्श कवि या नाटककार की प्रतिस्पर्धा में काव्य—साधना नहीं की है, उनसे आगे निकलने की तो उन्होंने कभी स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी। वे अपने आदर्श कवियों—भारतेन्दु, निराला, प्रसाद आदि से प्रेरणा लेकर और उन्हीं की राष्ट्रीय भाव—भूमि से जुड़कर काव्य—साधना में लीन हुए थे, किन्तु उनके नाटकों (एकांकी तथा पूर्ण नाटक) में नाटककार की आत्मनिष्ठा, भारत की सांस्कृतिक राष्ट्रीयता तथा भारत के आदर्शों एवं जीवन—मूल्यों की अवतारणा है। इसलिए नाटककार कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह को राष्ट्र की सामूहिक चेतना को जागृत करने वाला सबसे सफल नाटककार माना जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. कवि धर्म—ले० कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह—प्रतिभा प्रकाशन, नई दिल्ली—2018ई०
2. कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह ग्रन्थावली चतुर्थ एवं पंचम खण्ड —सम्पादक शिव मोहन सिंह लोक भारती प्रकाशन—2022ई०
3. जन्मेजय का नागयज्ञ—जयशंकर प्रसाद —भारती भण्डार प्रकाशन, इलाहाबाद, 1923ई०
4. चन्द्र गुप्त मौर्य; ऐतिहासिक नाटक, जयशंकर प्रसाद—भारती भण्डार प्रकाशन, इलाहाबाद, वि० सं० 2015

5. अजातशत्रु – जयशंकर प्रसाद– भारती भण्डार प्रकाशन, इलाहाबाद, वि० सं० 2003
6. स्कन्दगुप्त विक्रमादित्य ; ऐतिहासिक नाटक, जयशंकर प्रसाद– भारती भण्डारप्रकाशन, इलाहाबाद, वि० सं० 2013
7. प्रसाद और उनका साहित्य– विनोद शंकर व्यास–मुद्रक :- दुर्गादत्त त्रिपाठी, सन्मार्ग प्रेस, टाउन हाल बनारस, 2006ई०

- प्रो० सत्यपाल तिवारी
- विशाल भारतीय, मोबइल न०–9807500800